प्रकाशक—
विनोद पुस्तक मन्दिर,
हॉस्पिटल रोड, आगरा ।

प्रथम सस्करण फरवरी—१९५७
मूल्य २॥)

मुद्रक—राजकिशोर अग्रवाल, कैलाश प्रिंटिंग प्रेस,
बागमुजफ्फर खाँ, आगरा ।

दो शब्द

महादेवीजी की सूक्ष्म, सतरंगी एव अनेकरूपात्मक कला भावुक को सहज ही लीन कर लेती है किन्तु एक आलोचक के लिए उसकी व्याख्या करना बहुत कठिन कार्य है। प्रस्तुत व्याख्या को सरल तथा सिद्ध बनाने के लिए मैंने जो प्रयत्न किया है उसकी सफलता-असफलता का निर्णय तो साहित्य के विद्यार्थी ही करेंगे।

श्री लक्ष्मीनारायण टंडन, 'प्रेमी' तथा श्री रामखेलवान चौधरी ने आधुनिक कवि (महादेवी) की समालोचनात्मक टीका लिखी है। किन्तु मुझे उसमें अर्थ सम्बन्धी कुछ उलझनें प्रतीत हुईं। उदाहरण के लिए पाँचवें गीत की इन दो पंक्तियों—

'कन कन में बिखरा है निर्मम !
मेरे मानस का सूनापन।'

का अन्वय ऊपर की सभी कल्पनाओं के साथ होगा। किन्तु श्री प्रेमीजी तथा चौधरीजी ने ऊपर की कल्पनाओं का पृथक्-पृथक् अर्थ किया है।

४१ वें गीत की इन पंक्तियों का अर्थ देखिए—

विद्यु त के चल स्वर्णपाश से बँध हँस देता रोता जलधर ;
अपने मृदु मानस की ज्वाला गीतों से नहलाता सागर !

(पृ०—६५)

इसका अर्थ प्रेमीजी तथा चौधरीजी ने इस प्रकार किया है—

'बिजली रूपी चंचल स्वर्ण-डोरी में बँधा मेघ कभी तो हँसता है और कभी रोता है। कभी तो बिजली चमकती है और कभी मेह बरसता है। ऐसा लगता है कि जैसे सागर अपने कोमल हृदय से उत्पन्न अग्नि को अपने गीतों (सागर की लहरों) से नहलाता (शान्त करता) हो।'

वस्तुतः इन पंक्तियों में दो भिन्न कल्पनाएँ हैं जिनका परस्पर उपमेय-उपमान सम्बन्ध नहीं है। मैंने इनका अर्थ इस प्रकार किया है—

'बिजली के सुनहले बन्धन में फँसकर रोता हुआ मेघ भी हँसने लगता है। बिजली की चमक बादल की हँसी है। और सागर भी कल-कल ध्वनि करता अपनी लहरों से बड़वानल को शान्त करता है। क्यों? क्योंकि प्रिय आने वाले हैं इसीलिए ही तो सारी प्रकृति का दुख दूर हो गया है।'

तारकनाथ बाली
माधव आश्रम
आगरा छावनी।

हस्तलिखित गीत

पंथ होने दो स्वर्ण वेला !

शब्दार्थ—निर्माण-उन्मद=सृजन के आकांक्षी ।

भावार्थ—यदि मेरा कार्य नया है, यदि इस मार्ग पर चलने वाली मैं अकेली ही हूँ, तो भी कोई चिन्ता नहीं। वे कोई दूसरे ही पाँव होंगे जो पथ की विषमताओं से हार जाते हैं। वे दूसरे ही व्यक्ति हैं जो मार्ग की बाधाओं से भयभीत होकर अपने निश्चय तोड़ कर वापिस आ जाते हैं। करुणा का व्रत लेने वाले और सृजन के कांक्षी मेरे चरण तो अनन्त पथ को भी पार करने का साहस रखते हैं ! निरन्तर अपने मार्ग पर चलकर ये चरण ही अंधकार में डूबी हुई सृष्टि में उषाकाल का सुनहला प्रकाश फैला देंगे, कष्टों और व्यथाओं से भरे हुए जीवन में हर्ष का प्रकाश कर देंगे।

दूसरी होगी कहानी चिनगारियो का एक मेला !

भावार्थ—वह कोई दूसरी ही कहानी होगी जो विस्मृति में डूब गई है जिसका कोई भी शेष चिन्ह नहीं बचा है। किन्तु मैं तो निरन्तर आँसुओं की ऐसी हाट लगाती चल रही हूँ, और चिनगारियों का ऐसा मेला लगाती जा रही हूँ, जिसे देखकर प्रलय भी चकित हो गई है। मेरे आँसू और मेरे भावों के ससार को प्रलय भी नहीं मिटा सकती। इसलिए वह चकित है।

हास का दुकेला।

भावार्थ—चाहे तुम हँसी का बसन्त लेकर आओ, और चाहे तुम क्रोध से भरी दृष्टि का पतझर लेकर आओ, मेरा शान्त हृदय तो व्यथा के आँसुओं और मनोहर स्वप्नों के कमलों की भेंट लेकर ही तुम्हारा स्वागत करेगा। यह जान लो कि मिलन में तो प्रिय और प्रिया दोनो की निजी-सत्ता विलीन हो जाती है, दोनों एक होते हैं किन्तु विरह में प्रत्येक का अपना अस्तित्व बना

रहता है और एक को दूसरे की स्मृति बनी रहती है। महादेवी अपने व्यक्ति
को प्रिय में लीन नहीं कर देना चाहती, वरन् अपनी पृथक सत्ता को अक्षुण्ण
रखना चाहती है।

विशेष—'पथ'—महादेवी का पंथ करुणा का है। यह करुणा व्यक्तिग
नहीं समाजगत है। साथ ही इसमें निर्माण का अदम्य उत्साह है, ससार
स्वर्ण-प्रभात लाने की तीव्र इच्छा है। महादेवी ने स्वयं लिखा है—

"इस समय से मेरी प्रवृत्ति एक विशेष दिशा की ओर उन्मुख हुई जिस
व्यष्टिगत दुःख समष्टिगत गम्भीर वेदना का रूप ग्रहण करने लगा औ
प्रत्यक्ष का स्थूल एक सूक्ष्म चेतना का आभास देने लगा।" भूमिका पृ० ३

कहना नहीं होगा कि बाद के गीतों में महादेवी ने इसी 'सूक्ष्म' के प्रा
अपने उद्गार प्रकट किए हैं। प्रस्तुत गीत के अन्तिम छन्द में महादेवी
इसी 'सूक्ष्म' से सम्बोधन किया है।

"ले मिलेगा······शत दल' जब कोई प्रिय आता है तो अर्घ्य औ
पुष्प से उसका सत्कार किया जाता है।

"दुकेला" महादेवी की करुणा में स्वाभिमान भी है। इसीलिए व
अपने व्यक्तित्व को अलग रखना चाहती है।

स्पष्टतः महादेवी की करुणा के तीन गुण हैं। प्रथम वह व्यक्तिगत नहीं
समाजगत है, द्वितीय उसमें सृजन की उच्छ्वसित कामना है, तृतीय उसमें
स्वाभिमान है। तीनों गुण इस गीत में मिलते हैं।

महादेवी वर्मा
और उनका 'आधुनिक कवि'

१

निशा की इस पार !

शब्दार्थ—राकेश=पूर्णचन्द्र । अलकें=केश । मधुमदिर=मकरंद रूपी
रा । वात=पवन ।

भावार्थ—जब पूर्णचन्द्र रात्रि के केश खोलकर उन्हें चाँदनी में धो देता
, जब मधुमास कली से मधु की मदिरा खरीदने के लिए उसका मोल
ता था, जब पगला पवन ओस की बूँदों के हारों को धूल में बिखरा देता
, तभी तुम मुझे जीवन का मधुर संगीत सिखाने मेरे पास आए थे। जीवन
कितना माधुर्य है यह तुम्हारे आने पर ही मुझे ज्ञात हुआ।

राकेश और निशा, मधुमास और कली का तथा पागल पवन का मानवी
ण है।

बिछाती थी प्यार !

शब्दार्थ—कोर=दृष्टि । बिछलते=फिसलते ।

भावार्थ—करुणा से भरी तुम्हारी दृष्टि मेरे हृदय में मनोहर स्वप्नों की
लड़ियाँ जगा देती थी। तुम्हारी मुस्कराहट मुझे मीठी पीर में डुबो गई।
सीखे हुए रागों को मैं भूल-भूल जाती थी। मेरे हाथ बार-बार स्खलित हो
हो जाते थे। तब हे करुणेश ! तुम्हें मेरी इन भूलों पर प्यार आता था।

गए तब से झङ्कार !

शब्दार्थ—निर्वाण=बुझे ।

भावार्थ—हमारे मिलन को हुए कितने युग बीत गए। रातों में मैंने
कितने ही दीपक जलाए और वह प्रातःकाल बुझ गए। किन्तु मैं वैसा मोहक

गीत न सीख सकी जैसा तुम गाते थे। हे देव ! मुझ से अब गीत नहीं गाय जाता। मेरी अगुली थक गई है, वीणा के तार ढीले हो गए हैं। इसलि मेरी इस धु धली, झङ्कार को अपनी विश्व वीणा में मिला लो। मुझे अप में लय कर लो।

२

रजतकरो   आते !

शब्दार्थ—रजत कर=चाँदनी की किरणें। अञ्जन=सुरमा।

भावार्थ—जब ससार चाँदनी की किरणों की तूलिका में कोमल ओ की बूँदें भर भर कर कलियों पर अपनी करुण कथा लिख रहा था;

जब भोले मेघ पवन के रूप में सजल हृदय की उच्छ्वासें लुटा जाते थे जब रात का अन्धकार दिन में लगे घावों पर सुरमा बसाकर उन्हें शान्त कर के लिए फैल जाता था,

मधु की बूँदो   तान !

शब्दार्थ—तारक लोक=तारा लोक। नीरव=शान्त।

भावार्थ—जब मकरद की बूँदों में तारे रूपी फूल प्रतिबिम्बित हो लगे, और जब नदी का एकात किनारा वियोगी हृदय के धीर कम्पन समान उर्मिल हो उठा,

तब मूक प्रेम के समान, मीठी कसक के समान, स्वप्नों की पुकार समान जो मेरा प्रियतम है, वह चुपचाप मुरली की तान सुनाने आया।

चल चितवन   प्याले !

शब्दार्थ—निर्निमेष=अपलक।

भावार्थ—उनके चचल कटाक्ष रूपी दूतों ने गोपनीय बातों को सुनाव मेरे अपलक नयनों में तूफान उठा दिया।

तभी से मेरा जीवन पागल होगया है, प्राणों के घाव ही मेरी सञ्चि निधियाँ हैं, और मेरा मन अपरिमित पीड़ा पीने के लिए आकुल ह उठा है।

पीडा का   हास !

भावार्थ—मुझ में अथाह पीड़ा के साम्राज्य का निर्माण करने वाला मेरा प्रियतम एक दिन बहुत दूर क्षितिज के उस पार चला गया। इस पीड़ा का कहीं भी अन्त नहीं है। और मेरा मूक रुदन ही पहरेदार है जो मुझे इस पीड़ा के साम्राज्य से बाहर नहीं निकलने देता।

सखि समझाती है कि वह मिलन तो स्वप्न था। इस पर वियोगिनी उत्तर देती है 'हे सखि तू किस आधार पर कहती है कि मेरा वह मिलन स्वप्न था ? आज तक फूलों में प्रियतम की हँसी और मेरे आँसू भरे हुए हैं। फूलों की हँसी और ओस के आँसू ही हमारे मिलन की अनश्वर निशानी है।

विशेष—आरम्भिक गीतो में यह स्पष्ट दिखाई देता है कि महादेवी की विरह-करुणा व्यक्तिगत है।

आरम्भिक छन्दों मे प्रकृति का चित्रण करुण वातावरण का निर्माण करता है। आगे चलकर इसी वातावरण में करुण-मिलन होता है।

३

निश्वासो का ... अस्थिर है ससार !

शब्दार्थ—निश्वास = सास, पवन। नीड़ = घोंसला। अभिराम=सुन्दर।

भावार्थ—जब रात के ठडे समीर के झोंकों में सारा ससार सोया होता है, और जब तारे मोती के वन्दनवार के समान टूटकर छिपने लगते हैं, तब विलीन होते हुए नक्षत्रों के नयनों की करुणा ओस के आँसुओं में यह लिख जाती है कि संसार बहुत अस्थिर है।

हँस देता ... मादक है संसार !

शब्दार्थ—बिछलन=गति।

भावार्थ—जब प्रातःकाल आकाश के सुनहले आँचल में रोली बिखेर कर हँस देता है, जब लहरो की गतियों पर भोली किरणें छलकने लगती हैं, तब कलियाँ धीरे से पल्लव के कोमल घूंघट से उठाकर मदभरे नयनों से कहती हैं कि संसार बहुत मादक है।

देकर सौरभ दान ... निष्ठुर है संसार !

भावार्थ—जब फूल पवन को सुगन्धि देकर मुरझा जाते हैं तब वायु के

झोंके फूलों में रेत भर देते हैं। इस पर फूल पवन से कहते हैं कि हम जिस पवन के पावों के नीचे बिछे वही क्यों हमारी आँखों में रेत भर रहा है उधर भँवरों की गुन्जार भी यही कहती है कि अब इन पुष्पों में क्या बचा है ये तो मुरझा गए हैं तब पल्लवों की मर्मर ध्वनि यह कहती है कि ससार बहु निष्ठुर है।

स्वर्ण वर्ण ... मतवाला ससार !

शब्दार्थ—क्षार=जला। पारावार = सागर।

भावार्थ—सध्या के समय जब दिन सुनहले रग में अपने जीवन क समाप्ति की सूचना देता है और जब गोधूली आकाश में असख्य तारों वे दीपक जला देती है, तब बढ़ते हुए अधकार का सागर यह कहता है कि युग बीत गए किन्तु फिर भी मतवाला संसार अभी तक जीवित है।

जब एक की पराजय होती है तो जीतने वाला दीपावली मनाता है। कि यह जीत भी कभी पराजय बन जाएगी, यही सोचकर अँधकार हँसता है।

स्वप्न लोक ... पागल है ससार !

शब्दार्थ—स्वप्न लोक के फूल=मधुर कल्पित आशाएँ।

भावार्थ—कल्पना की मधुर आशाओं से अपने जीवन को अलकृत क जब मेरा पागल हृदय यह सोचता था कि मेरा कल्पित सुख का राज्य अनश्व है तब न जाने किस अनजान देश से किसी की झङ्कार व्यथा भरे स्वरों में य सुना जाती थी कि यह ससार बहुत पागल है।

विशेष—महादेवी ने ससार की अस्थिरता, मादकता, निष्ठुरता, मत वाले पन और पागलपन को देखा है। किन्तु मादकता, मतवालापन औ पागलपन सभी ससार की निष्ठुर अस्थिरता में परिवर्तित हो जाता है।

४

रजनी ... भरकर डाली !

शब्दार्थ—तटनी=नदी। विधु=चन्द्रमा। प्राची=पूर्व दिशा। चितेरा चित्रकार।

भावार्थ—जब रात्रि तारों से अलकृत जाली को ओढे हुए जा रही थी तब उसकी लुटती हुई समृद्धि को देखकर चाँदनी ओस के आँसू रोती थी,

जब लहरों को चूमती हुई, चन्द्रमा को छू लेने के लिए आकुल नदी मूक अंधकार का आलिंगन कर रही थी,

जब मलय-पवन अपने दुख की गाथा सुनाता था तब सारी धरती आँसुओं से भीग जाती थी,

जब सौरभ पल्लव के झूले डालकर कलियों में सो रहा था, और जब पराग से सनी कुंजों में धीरे-धीरे किरणें आ रहीं थीं,

जब जाग कर ही सारी रात बिताकर पीला चन्द्रमा छिपने लगा, और जब प्रातःकाल रूपी मित्र पूर्व दिशा में चित्र बनाने के लिए आया ;

जब कण-कण में प्रातःकालीन लालिमा छाई थी, तभी मैं निर्धन सपनों से डाली भरकर ले आई।

जिन चरणो की   अँधेरा !

शब्दार्थ--हीरक जाल=हीरों के समूह। व्रीड़ा=लज्जा। निर्मम=निष्ठुर।

भावार्थ—जिस चरणो के नाखूनो की आभा ने हीरों की ज्योति को भी लजा दिया था, उन पर मैंने अपने दो-चार धुधले आँसू चढ़ाए। प्रियतम की महिमा और प्रियतमा की दरिद्रता सूचित होती है।

उनके दर्शनों के लिए लालायित इन पलकों पर जब लज्जा का अकुश था, तभी मुझे उस चितवन ने पीड़ा का राज्य दे दिया। मैं उन्हें खुलकर देख भी न पाई कि वियोग हो गया।

उस सुनहले स्वप्न को देखे हुए युग ही व्यतीत हो गए हैं। निरन्तर रोते रहने से नयनों के खजाने खाली हो गए हैं।

मेरा जीवन शून्य हो गया। मैं इस सूने पन की मस्त रानी हूँ। पापों को वियोग की आग में जलाकर मैं निरन्तर अपने सूने राज्य में दिवाली करती रहती हू। एक तो सूनापन और उस पर वियोग की आग।

मेरी आहें इन् ओठों मे ही सो गई हैं। हृदय पर लगे हुए घाव ही मेरी निधि हैं।

हे निष्ठुर ! बेशक मेरे प्राणों का दीपक बुझ जाए। इसकी मुझे कोई चिन्ता नहीं है। किन्तु इसके बुझने पर तेरा पीड़ा का राज्य अँधेरा हो

विषम गति का—सुखमय तथा दुखमय क्षणों का—ज्ञान होता है। किन्तु निरंतर साधना में लीन रहने वाले को समय की गति का भान नहीं होता। कवयित्री कहती है कि मैं विरह की आराधना करते-करते ही प्रियमय हो गई हूँ। मुझे प्रिय के विरह में भी प्रियतम से मिलन की अनुभूति होती है।

मूंद पलको मे   भावना ले।

शब्दार्थ—अचचल=स्थिर, शान्त। नयन का जादूभरा तिल=प्रेम भरी पुतली। अलख=अलक्ष्य। अविकल=शान्त।

भावार्थ—मैं अपने शान्त नेत्रों में प्रेम भरी पुतली को स्थिर कर अपने अलक्ष्य शान्त प्रिय को अपना मधुर रूप धीरे धीरे अर्पण कर रही हूँ। हे प्रिय! मुझे आज वही वर दो कि मुक्ति भी बन्धन की कामना लेकर आए इस जीवन बन्धन के सुख को मुक्ति भी अपने लिय काम्य समझे। बन्धन का सुख मुक्ति के सुख से अधिक काम्य तथा गम्भीर है।

आज मुझे विरह का यह दीर्घकाल मिलन के एक पल के समान दिखाई देता है। विरह का दीर्घकाल अत्यन्त अल्प भी मालूम होता है और उसी में मिलन की सुखानुभूति भी हो रही है। दुख और सुख में कौनसा भाव अधिक तीव्र तथा पीड़क है, मैंने इस बात को न समझ पाया है, न सीख पाया है। मेरे लिए सुख दुख दोनों समान है। प्रिय की भावना में, प्रियतम के प्रेम की साधना में मेरे लिए सभी कोमल तथा कठोर भाव मधुर ही हो गए हैं।

६९

अलि   आख्यान चली!

शब्दार्थ—अलि = सीख। हीरक जल = हीरे के समान स्वच्छ जल, आँसू। इन्द्र धनुष करते = उल्लास का सृजन करते हैं। मुक्ताहल=मोती जल की बूंदें। सुख आख्यान=सुख की कहानी।

भावार्थ—हे सखि! अब मैं इस ससार के कण कण से परिचित होगई हूँ। अब मैंने ससार में सब का विलाप समझ लिया है।

यहाँ के कुछ लोगों के आँखों में आँसू भरे होते हैं। कुछ के नेत्रों में इन्द्रधनुष के समान आकर्षण और वैभव की छाया होती है। और कुछ

व्यक्ति अपनी कल्पनाओं में असफल होकर आँसू बहाते हैं। उनके आँसू सपनों के टूटे हुए मनकों के समान उनके सूखे होठों पर गिरते हैं।

जिन मोतियों से बादल भरे हुए हैं, जो ओस के मोती रात के समय तारों से तिनकों पर उतरा करते हैं, मैं उन सब का रहस्य जान चुकी हूँ, उसके अतिरिक्त मैंने आकाश, धूल, रस, विष तथा आँसू का भी सब रहस्य जान लिया है। मैंने दुख को सुख की कथा बना दिया है। विरह की वेदना ही मेरे लिए सम्पूर्ण सुख है।

जिसका वरदान चली !

शब्दार्थ—दंशन=डंक। जर्जर=दुर्बल। मानस=हृदय ! आहत=घाव-युक्त। फूलों का स्पन्दन=फूलों का नृत्य। कण्टक=काँटा, विपत्ति।

भावार्थ—उपवन के काँटे की चुभन से अंग सिहर उठते हैं। वह फूलों के नृत्य के कारण कोमल दिखाई देता है तथा एकान्त मार्ग का काँटा पाँव में चुभकर मन को आहत कर देता है।

और वह अकेला होने के कारण तेज है। मै उपवन के कारण निर्जन मार्ग के प्रत्येक काँटे का रहस्य समझ चुकी हूँ। और मैं इस संसार को अबा-धित गति का वरदान देकर जा रही हूँ। यह सिखा रही हूं कि सब प्रकार की बाधाओं के होते हुए भी हिम्मत नहीं हारनी चाहिए तथा निरन्तर मार्ग पर बढ़ते जाना चाहिए। इस छन्द में क्रमालकार है।

जो जल लयवान चली !

शब्दार्थ—विद्युत प्यास=बिजली की प्यास। आतप=धूप। मरु=रेगि-स्तान। उर्वर=उपजाऊ भूमि।

भावार्थ—मेघ में धूल के कण होते हैं। कवयित्री कहती है कि रेगिस्तान अथवा मरुभूमि के कण जब मेघ में होते हैं तो वे बिजली के लिए प्यासे होते हैं। धूल के कण निरन्तर तप तप कर पवित्र हो जाते हैं। झरते हुए फूलों को यही प्रेम से गले लगाते हैं तथा चन्दन के समान उन पर फैल जाते हैं। आँसू से धुल धुलकर ये कण उज्ज्वल होगए हैं। मनुष्यों के निष्ठुर चरण उन्हें हमेशा कुचला करते हैं। मैं मरुभूमि तथा उर्वर भूमि के पीरभरे प्रत्येक अणु का कम्पन समझ चुकी हूँ, उसके प्रत्येक रहस्य से अवगत हो चुकी हूँ।

और अपने प्रत्येक पग को संगीत की लय के समान आगे बढ़ाती रही।

नभ मेरा निर्माण चली।

शब्दार्थ—नभ मेरा सपना स्वर्ण-रजत=दिन के समय आकाश पर सुनहला प्रकाश होता है और रात को चाँदी के समान सफेद, ऐसा आकाश मेरा सपना है। साधों = इच्छाओं। दिव=स्वर्ग, दिन।

भावार्थ—दिन के समय सुनहले प्रकाश से सुशोभित तथा रात्रि के समय चाँदनी से युक्त यह आकाश मेरा ही सपना है। इसका निर्माण मैंने ही किया है। और यह सारा संसार मेरा चिर परिचित साथी है। काँटों तथा फूलों से–दुखों तथा सुखों से–युक्त यह मार्ग मेरी इच्छाओं से बना हुआ है। मैं अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए इस मार्ग पर चली हूँ इसलिए मार्ग को इच्छाओं से निर्मित कहा है।

मेरे इन आँखों के आँसुओं से भीगी हुई धूल भी स्वर्ग से अधिक गर्वीली है। मैं सुख के कारण चंचल बने जीवन को, तथा व्यथा के भार से दबे हुए जीवन को भली भाँति समझ गई हूँ। मैंने अपने मिटने के लिए इस प्रेमपथ का निर्माण किया है।

७०

मोम सा गल चुका है।

शब्दार्थ—शिथिल पग=थके हुए चरण। निर्निमेषी=अपलक। तिमिर-वेषी=अन्धकार में लीन। अज्ञात देशी=अनजान।

भावार्थ—इस कविता में मरण का रहस्यात्मक वर्णन है।

कवयित्री कहती है कि मेरा शरीर मोम के समान घुल गया, है तथा मेरा मन भी दीपक के समान जल चुका है। अब न तो शरीर में शक्ति ही रही है और न ही मन में चेतना।

विरह के रंगीन क्षणों को तथा आँसुओं के बचे हुए जल-कण को लेकर बरुनियों में उलझ कर टूटे हुए सपनों के गन्धहीन फूलों को लेकर मेरा थका विश्वास रूपी दूत प्रिय की खोज में निकल चुका है। मेरे अन्तिम श्वास में भी विरह के आँसू तथा बिखरे हुए स्वप्नों के अतिरिक्त और कुछ नहीं था।

पहले मेरे पलक बड़े चंचल थे, किन्तु आज वे स्तब्ध हैं। कल्प और

क्षण सब अन्धकार में लीन हो गए हैं। मुझे अब समय का ध्यान नहीं रहा। पहले मेरा हृदय नित्य धड़कता रहता था। किन्तु आज उसके लिए धड़कन अनजान होगई है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह कभी जीवित था ही नहीं। मेरी चेतना का सोना वेदना की जलती हुई ज्वाला में गल चुका है। मेरा जीवन विरह में समाप्त हो चुका था।

झर चुके ढल चुका है ?

शब्दार्थ—तारक-कुसुम=तारे रूपी फूल। रश्मियों के रजत पल्लव = किरण रूपी सफेद पत्ते। सन्धि=मिलन। याम=पहर।

भावार्थ—प्रभात के समय जब प्रकाश तथा अन्धकार के मिलन की वेला में तारे रूपी फूल झर जाते हैं, चाँद की किरण रूपी पत्ते मुरझा जाते जाते हैं, तब क्या आकाश नहीं जानता कि उस पार से दिन का वासन्ती रथ चल चुका है ? दिन होने वाला है ?

मृत्यु के समय चेतना तथा अन्धकार का मिलन होता है सब स्वप्न झर जाते हैं, तो उस पार से आत्मा को लेने के लिए रथ आता है।

व्यंजना के द्वारा पतझर के पश्चात वसन्त के आने की ओर भी संकेत है। वृद्धावस्था के पश्चात नवीन जन्म की प्राप्ति पतझर के पश्चात वसन्त के आगमन के समान ही है।

जो अज्ञात पुरुष दीपक को जलाकर उससे यह कह गया है कि तू अन्धकार में अपने पाँव आगे बढा, अँधेरे में ही प्रकाश फैलाता जा, तो रात को प्रकाशित करने वाले उस दीपक को परिश्रम के कारण धुंधला देखकर उसका बुझना समीप देखकर, क्या वही आकर यह नहीं कहता कि अब तेरा अन्तिम पहर समाप्त हो रहा है ? अब तेरे जीवन का अन्त होने वाला है।

उसी प्रकार जिस अज्ञात प्रियतम ने जीवन दिया है वही अन्त की वेला निकट आने पर यह भी बताता है कि तुम्हारा जीवन अब समाप्त होने वाला है। जीवन का गतिमान होना अन्धकार में पग बढ़ाने के समान ही है। कोई यह नहीं जानता कि जीवन का वास्तविक लक्ष्य क्या है। सभी अन्धेरे में चले जा रहे हैं।

८

अन्त हीन मचल चुका है !

शब्दार्थ—विभावरी=रात। अगारक-तरी=अगारों की नाव। तिमिर की तटिनी=अन्धकार की नदी। सुधि पतवार=स्मृति रूपी पतवार। बिछल चुका है=गिर चुका है। इ गित=इशारा।

भावार्थ—रात का कोई अन्त नहीं है। मेरे पास केवल वेदना के अगारों की नाव है। उधर अन्धकार की नदी ने क्षितिज की रेखा भी डुबो दी है। किनारा भी दिखाई नहीं देता और अलसाए हुए हाथ से स्मृति का सुन्दर पतवार गिर गया है।

कोई नहीं जानता कि मृत्यु के पश्चात किधर जाना है, जाने के साधन क्या हैं। नाव अग्नि की है, पतवार है नहीं, कुछ दिखाई देता नहीं, किनारा भी डूब गया है, क्या पता कहाँ जाना है।

ऐसे समय कवयित्री प्रश्न करती है कि अब तुम्हारा क्या सन्देश है ? क्या अभी और भी कोई विशेष वेदना की ज्वाला भोगनी है ? अथवा क्या इस भयकर मार्ग के उस पार चन्दन तथा चाँदनी का बना हुआ शीतल तथा सुखद देश है ? हे प्रिय ! बस तुम्हारा एक इशारा ही पर्याप्त है। तुम्हारे एक इशारे के लिए ही मेरा प्राण सैकड़ों बार मचल चुका है।

७१

पथ मेरा सन्धान बन गया !

शब्दार्थ—विद्युत लोक=बिजली का ससार, प्रसन्नता का संसार। रेणु=धूल। हिम तरल=शीतल तथा चचल। उफान=तूफान। अन्जन-वदना=काले मुख वाली, अन्धकार से घिरी हुई। चित्रित अवगुण्ठन=रंगीन वस्त्र, रग-बिरगे मेघों का वस्त्र। मरकत वीणा=नीलम की वीणा, अन्धकार की वीणा।

भावार्थ—मेरा मार्ग ही मेरे लिए निर्वाण हो गया है। मेरा प्रेम का मार्ग तथा विरह की वेदना ही मेरे लिए निर्वाण के समान सुखपूर्ण तथा रमणीय हैं। और इस मार्ग पर पड़ने वाला मेरा एक-एक कदम सैकड़ों वरदानों के समान आनन्द दायक है।

आज थके हुए चरणों ने निराशा के सूने अन्धकार में आशा तथा आनद

का एक नवीन लोकनिर्माण किया है। मेरी धुँधली छाया से चाँदनी की धूल के समान शान्ति और करुणा बरस रही है। आज प्रलय के भयङ्कर मेघ भी गलकर शीतल तथा चचल आँसुओं के रूप में बदल गये हैं। आज भयङ्कर से भयङ्कर विपत्तियाँ भी सरल हो गईं हैं।

मेरे इस हर्ष के क्षण पर सारी प्रकृति भी हर्षोत्फुल्ल है। अज्ञान तथा निराशा की रात बीत गई है और आनन्द का वैभव सर्वत्र फैल रहा है।

काली दिशाएँ चकित हो गईं और उन्होंने प्रभातकाल में रगीन बादलों का सुन्दर वस्त्र पहना। रात ने अपनी नीलम की वीणा पर सुनहली किरणों के तार सँभाल लिए। प्रभात वेला मे पक्षियों का सगीत गूँजने लगता है। मेरे कम्पन से तूफान का भयङ्कर गर्जन मधुर सगीत में बदल गया। जब पथ में प्रियतम की प्राप्ति हो गई तब निराशा की रातें बीत गईं और उषा का सुनहला प्रकाश फैल गया है।

पारद सी ... पहचान बन गया।

शब्दार्थ—पारद=पारा। चन्दन चर्चित=चन्दन के लेप से युक्त। अंगराग =चन्दन। मधुपर्क=सुगन्धि, आनन्द। निमिष=पलक।

भावार्थ—कठोर शिलाएँ भी द्रवित होकर पारे के समान हो गईं। आकाश चन्दन से युक्त आँगन के समान आकर्षक दिखाई देने लगा। पुष्प-रज मेरे लिए चन्दन और कपूर बन गई। धूप सुगन्धि का आलेप हो गई। और शूलों की पीड़ा मेरे लिए कलियों की सुगन्धि—हर्ष—के समान हो गई। आनन्द में सारी प्रकृति ही शीतल, हर्षित तथा रमणीक दिखाई देने लगती है।

आज मेरी प्रत्येक साँस मिलन तथा विरह की सैकड़ों कथाएँ लिख रही रही है। मेरे पलक अपने अस्तित्व को मिटाकर किन्हीं अनजान चरणों की रेखा बन रहे हैं, प्रियतम के पद-चिन्ह देख रहे हैं। मैंने जो एक क्षण भर के लिए तुम्हारा स्वप्न देखा था, वह मेरी तथा तुम्हारी सनातन पहचान बन गया है।

देते हो ... प्राण बन गया।

शब्दार्थ—पाहुन=अतिथि।

भावार्थ—तुम मेरी हँसी को करुणा के आँसुओं से भरकर लौटा देते हो और मेरे आँसुओं को तुम अपनी हँसी से आकर्षक बना देते हो। मेरे आँसुओं में तुम्हारी हँसी है, और मेरी हँसी में तुम्हारे पिए हुए करुणा के आँसू। आज मेरा अतिथि प्राण तुम्हें छूकर मृत्यु का दूत बन गया है। संसार में नश्वरता का सन्देश दे रहा है।

७२

हुए शूल ... ओ' दिन।

शब्दार्थ—शूल = काँटे। अक्षत = चावल। छबीले = अनेक वर्ण वाले। हसित=प्रसन्नता देने वाले। कण्टकित=दुख देने वाले। असित=काले। पुरातन=प्राचीन।

भावार्थ—आज इस विरह-वेदना की तीव्रता में मेरे दुख भी सुख बन गए हैं। मेरे विपत्ति रूपी काँटे मेरी पूजा के चावल बन गए हैं। मेरे शरीर की धूल चन्दन बन गई है।

मेरी साँस अगरबत्ती के धूम के समान ही स्मृति रूपी सुगन्धि से भरी हुई है। मेरे प्रेम की लौ शान्त आरती बन गई है। और मेरे नेत्रों का आँसू अभिषेक का जल बन गया है।

सुनहले, सुन्दर, अनेक रंगों वाले, प्रसन्नता देने वाले, दुखपूर्ण तथा आँसू रूपी पुष्परस से युक्त मेरे स्वप्न रूपी असंख्य फूल बिखरते रहते हैं।

जो सृजन तथा प्रलय के सफेद तथा काले गन्धर्व हैं, जो हृदय के लिए अपरिचित होते हुए भी नेत्रों के लिए अत्यन्त प्राचीन हैं, वही दिन और रात मुझे पुजारी मिले हैं।

परिधिहीन ... नाश के क्षण ?

शब्दार्थ—परिधि हीन = असीम। चरण-पीठ = चरण धरने की चौकी। स्वन=शब्द। वरद=वरदान देने वाली।

भावार्थ—अनेक वर्ण के मेघों से भरा हुआ असीम आकाश ही मेरा मन्दिर है। धरती का करुण हृदय ही मेरे चरणों की चौकी है। सागर की आवाज में शंख की ध्वनि है। भगवान का मन्दिर होता है। उसके चरणों के नीचे चौकी होती है तथा मन्दिर में शंख बजा करते हैं।

यह मत कहो कि मुझे कोई प्रलय के द्वार पर रोक लेगा, प्रलय मेरा अन्त कर देगी। मैं तो स्वय वर देने वाला हूँ मुझे कोई दूसरा क्या अमरता का वर देगा। क्या सुगन्धि को फूल अपने आप में बाँधकर रख सकता है?

मै व्यथा से भरा हूँ किन्तु फिर भी सुख का निवास मैं ही हूँ। जिसने दुख नहीं देखा वह सुख को क्या पहचानेगा और दूसरों को कैसे सुख देगा? मैं आग में घुला हुआ मोम का देवता हूँ। चाहे मैं मोम का हूँ किन्तु आग भी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। फिर मैं सृष्टि बनकर क्यों नाश की ओर बढ़ूँ?

७३

वह ... जलने दो!

शब्दार्थ—नीरव=चुपचाप। रजत=चाँदी जैसे सफेद। उपल=पत्थर। इष्ट=आराध्य। अजिर का शून्य=आँगन का सूनापन। अलिन्द=घर के बाहरी द्वार के सामने का चबूतरा। प्रणतशिरों के=झुके हुए सिरो के। अर्चित-कथा=पूजा की कहानी।

भावार्थ– कवयित्री कहती है कि मेरी साधना के दीपकों को मेरे प्रियतम के मन्दिर में चुपचाप जलने दो। कुछ समय पहले जब आरती हुई थी तो चाँदी जैसे सफेद शखों तथा घड़ियालों की आवाज तथा सुनहली वशी तथा वीणा के सगीत से सारा वातावरण गूँज उठा था। तब यहाँ पर नर-नारियों के मधुर कठ का सगीत गूँज रहा था। उस समय के सगीत से प्रभावित होकर पत्थर भी हँस उठे थे तथा प्रकाश की किरणों में अंधकार अठखेलियाँ कर रहा था। किन्तु उस आरती की वेला बीत गई है। मन्दिर में देवता अकेला है। मेरे इस दीपक को ही आँगन का सूनापन दूर करने के लिए जलने दो।

थोड़ी देर पहले मन्दिर के बाहर के सुनहरी चबूतरे पर अनेक नर-नारियों के चरणों के चिन्ह अङ्कित थे। चन्दन की दहली मे झुके हुके असख्य सिर थे। देवता के ऊपर फूलो की वर्षा हुई थी, सफेद अक्षत चढ़ाए गए थे, अपरिमित धूप, अर्घ्य, तथा नैवेद्य चढाया गया था। किन्तु थोड़ी देर पश्चात ही सब अन्धकार में लीन हो जाएँगे। इसलिए सब की पूजा की कहानी को

इसी दीपक में सचित रहने दो। इस दीपक को जलता हुआ देखकर ही आरती तथा पूजन आदि की कल्पना की जा सकती है।

पल के चलने दो।

शब्दार्थ--पल के मनके फेर पुजारी=हे मन, एक एक क्षण गिनकर काट। प्रस्तर=पत्थर। मसि-सागर=स्याही का सागर-मार्ग अन्धकार में लीन होगया। दिग्भ्रान्त=दिशाज्ञान का अभाव। लघु प्रहरी = छोटा चौकीदार। रेखा=किरण।

भावार्थ—हे मन रूपी पुजारी। सारा ससार सो गया है। अब तू क्षणों की माला फेर, एक-एक पल गिन गिन कर काट। जागरण के समय बड़ा कोलाहल था। जब वह पत्थरों से टकराता था तो प्रतिध्वनि होती थी। जब सब सो गए तो प्रतिध्वनि भी पत्थरों में लीन होगई। जीवन साँसों की समाधि के समान दिखाई दे रहा है। सारे प्राणी चुपचाप स्थिर होकर बस साँसें ले रहे हैं। मार्ग स्याही के सागर सा बन गया है— कुछ भी सुझाई नहीं देता। और दिन के समय जो कण-कण में कम्पन हो रहा था वह बन्द होगया। अब फिर से इस ज्वाला मे प्राणों को जलने दो, इसे जीवन की कहानी कहने दो।

रात के इस घने अधकार में तूफान भी पथ भ्रष्ट होगया है। रात पूर्णतः वेसुध है। आज प्रकाश के इस छोटे चौकीदार को पुजारी बन जाने दो। इसके प्रकाश मे कोई अपना मार्ग ढूँढ ले। जब तक दिवस की हलचल लौट नहीं आती तब तक मेरी साधना का यह दीपक निरन्तर जलता रहेगा और अपनी किरणों में प्रकाश का पानी भरकर बिखेरेगा। यह दीपक सध्या का दूत है इसे प्रभाती तक सफ़र करने दो।

७४

पूछता क्यो एकाकिनी वरसात।

शब्दार्थ—अमर सम्पुट=अविनश्वर जीवन। कज्जल-दिशा=काली दिशा, अधकार। परिधि=घेरा। अवदात=सफेद। खद्योत=जुगुनू। तिमिर-वात्याचक्र= अधकार का तूफान। पवि=वज्र। विद्यु त-शिखा=बिजली की ज्वाला।

भावार्थ--हे मेरी साधना के दीपक तू यह क्यों पूछता है कि कितनी रात शेष बची है। तुझे तो अमर जीवन प्राप्त है। तू जिनके नाखूनों की शोभा को छूकर जिनके सकेत से जला है, और जिनकी मधुर स्मृति लेकर तू इस अंधेरी रात में बढ़ता चला जा रहा है, वे ही सफेद उँगलियाँ तुझे घेरे हुए हैं।

सारे जुगुनू छिप गए। रात के इस तूफान में सारे तारे भी छिप गए हैं। वज्र के हृदय में बिजली की ज्वाला भी काँप कर बुझ गई है। अकेली बरसात तेरे साथ की कामना करती है।

व्यङ्गमय वात !

शब्दार्थ--ज्वालावाही = ज्वाला को वहन करने वाला। छीनता=मलिन होता। भारती=वाणी। प्रलय झंझावात=प्रलयङ्कर तूफान।

भावार्थ--आज आकाश तुझ पर व्यग करता दिखाई देता है। प्रत्येक कण तुझ से यह प्रश्न कर रहा है कि तेरा परिचय क्या है, तेरा बसेरा कहाँ है ? आज ज्वाला को वहन करने वाला तेरा श्वास, तेरी लौ ही सब की प्रश्नों का उत्तर दे। नित्य जलते रहना यही तेरा परिचय है। इधर तू जल-जल कर मन्द पड़ता जाता है, और उधर प्रातःकाल निकट आ रहा है।

तू भय मत कर। यदि प्रलयंकर तूफान भी आता है तो तू अपनी झुकी हुई लौ की आरती लेकर, नीला कुमकुम तथा सुनहले अक्षत वारती हुई धूम लेखा लेकर, और शाँत हृदय में प्रेम से उज्ज्वल पीड़ा की कहानी लेकर उनसे मिल। तुझे तूफानों से भयभीत नहीं होना चाहिए।

यहाँ मिलन की आशा का चित्र अंकित है।